INTERNATIONA[illegible] [illegible]RNAL OF INNOV[illegible]ON IN ENGINEERING RESEA[illegible] & MANAGEMENT ISSN: 2348 4918
PEER REV[illegible]ED AND REFEREED JOURNAL IMPACT FACTOR [illegible] (INTERNATIONAL JOURNAL)
[illegible] CONFERENCE (ICOSD) 20[illegible]

सतत विकास में शिक्षा की भूमिका

डॉ. आभा सिंह
सहायक आचार्य, शिक्षा विभाग, जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं

सारांश - विकास मानव प्रकृति है इस विकास के कारण ही. मानव सुख–सुविधापूर्ण जीवन व्यतित कर रहा है किन्तु इस विकास की कीमत प्रकृति ने चुकाई है। विकास तो एक सतत प्रक्रिया है जो मानव अपने उदगम से ही करता आ रहा है। किन्तु जब तक उसने विकास एवं प्रकृति में संतुलन रखा वह सुखी था। औद्योगिक क्रांति के पश्चात् मानव ने प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र दोहन प्रारम्भ कर दिया। परिवहन क्रान्ति, नगरीकरण, तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कारण पर्यावरण संतुलन बिगड़ने लगा है और परिणाम स्वरूप प्राकृतिक आपदाओं में वृद्धि, पर्यावरण में विकृतियां उत्पन्न होने लगी है। यह समस्याएं हमें सोचने पर बाध्य कर रही है कि विकास को एक नई सोच एक नई दिशा प्रदान करने की आवश्यकता है जो विकास एवं प्रकृति के मध्य सामंजस्य रख सके। एक ऐसा विकास जो वर्तमान की आवश्यकताओं को पूरा करने के साथ भविष्य की आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता रखता हो।

सतत् विकास का एक महत्वपूर्ण पक्ष पर्यावरण शिक्षा है। अर्थात् पर्यावरण के विविध पक्षों, इसके घटकों, मानव के साथ अंतसम्बन्धों आदि की समुचित जानकारी देना। जब तक प्रत्येक व्यक्ति पर्यावरण एवं जीवन में उसके महत्व को नहीं समझेगा। उस समय तक वह अपने पर्यावरण के प्रति उत्तरदायित्व को नहीं समझ सकेगा, पर्यावरण शिक्षा वह माध्यम है जिसके द्वारा पर्यावरण तथा विकास के मध्य संतुलन किया जा सकता है।

Key Words - सतत् विकास, पर्यावरण शिक्षा

1 प्रस्तावना

विकास मानव प्रवृत्ति है इस विकास के कारण ही मानव सुख–विधापूर्ण जीवन व्यतित कर रहा है। सृष्टि के आदिकाल से ही मनुष्य अपने जीवन को सुखमय बनाने के लिए हमेशा प्रयत्नशील रहा है। इसलिए उसने अनेक आविष्कार किये और जैसे–जैसे उसकी आवश्यकताएं बढ़ी, वह साधनों का विकास करता गया। किन्तु इस विकास की कीमत प्रकृति ने चुकाई है। विकास तो एक सतत् प्रक्रिया है जो मानव अपने उदगम से करता आ रहा है।

हमारे चारों ओर फैला प्रकृति का यह सुन्दर करिश्मा ही वातावरण का सृजनकर्ता है। पर्यावरण के सभी घटक एक–दूसरे पर निर्भर है तथा एक–दूसरे को प्रभावित करते हैं। जिस प्रकार पर्यावरण की सुन्दरता एवं भव्यता मानव पर आधारित है, उसी प्रकार मनुष्य का जीवन पर्यावरण पर निर्भर है। आदिमकाल में प्रत्येक मनुष्य को अपने अस्तित्व हेतु पर्यावरण का समुचित ज्ञान आवश्यक होता था। वैदिककालीन ऋषि–मुनियों ने भी प्रकृति की जननी माना है। जो अपना सब कुछ अपने बच्चों को अर्पण कर देती है तथा अपने स्वयं के लिये कुछ नहीं चाहती। मानव व प्रकृति में जब तक यह परस्पर प्रेम व संवेदना से परिपूर्ण सम्बन्ध रहा मानव जाति के लिए प्रकृति वरदान बनी रही। कृषियुग का आरम्भ होने पर वनों को बेहताशा काटा जाने लगा, जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ खेती का दायरा बढ़ने लगा और स्थायी रूप से घुम्मकड़ मानव को एक स्थान पर बसने की प्रक्रिया का आरम्भ हुआ। अब तक वन क्षेत्रों के दायरे घटने से कोई विशेष हानि का अनुभव नहीं हुआ, क्योंकि वनों का क्षेत्र विशाल था और वनस्पति का बाहुल्य था।

ओद्यौगिक क्रान्ति के पश्चात मानव ने प्राकृतिक संसाधनों का तीव्र दोहन प्रारम्भ कर दिया। परिवहन क्रांति, नगरीकरण, तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कारण पर्यावरण संतुलन बिगड़ने लगा है। जैसे–जैसे मनुष्य आधुनिक युग में प्रविष्ट होता गया वैसे–वैसे उसके जीवन में नई–नई समसया आती गई।

2 सतत्/संघृत विकास

मानव विकास की यात्रा में पर्यावरण का सतत् उपयोग करता है और विकास के प्रत्येक चरण का पर्यावरण पर भी प्रभाव पड़ता रहा किन्तु जब तक यह प्रभाव सीमित था पारिस्थितिकी तन्त्र पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ा किन्तु जब यह सघन एवं विस्तृत होने लगा तो उसका दुष्परिणाम सम्पूर्ण जीव जगत् पर होने लगा है। इसी कारण यह प्रश्न उठने लगा है कि क्या विकास को रोक दिया जाए यदि नहीं तो विकास की दिशा क्या हो। इसका तात्पर्य यह है कि विकास ऐसा होना चाहिए जो न सिर्फ मानव समाज के तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति करे वरन् स्थाई तोर पर भविष्य के लिए निर्बाध विकास का आधार प्रस्तुत करें। संघृत या शाश्वत विकास की अवधारणा सर्वप्रथम, 1987 ई. में ब्रुटलैंड प्रतिवेदन में प्रकट हुई जिसमें इस तथ्य पर जोर दिया गया कि आर्थिक विकास की ऐसी पद्धति अपनाई जानी चाहिए जिससे भावी पीढियों के विकास के आधार या अवसर पर आंच न आये। विकास, मानव की जरूरतों तथा मानव जीवन की गुणवत्ता के लिए जैव अजैव संसाधनों का ऐसा उपयोग तथा जैव मण्डल का ऐसा परिष्कार है जो वैकल्पिक कार्यों के अल्पकालिक एवं दीर्घकालिक लाभ एवं हानि का सम्यक ध्यान रखे। इसके लिए सामाजिक, पारिस्थितिकी तथा आर्थिक सभी प्रकार के कारकों पर सम्यक ध्यान देने की जरूरत होती है। सतत् विकास का उद्देश्य–मानव समाज की विद्यमान मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति को बिना भावी पीढ़ियों की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमता को किसी प्रकार नुकसान पहुंचाये सुनिश्चित करना। इस दृष्टि से सतत विकास वातावरण के ऐसे संरक्षण

Scanned by CamScanner